दिव्य शिशु

सन् 1896 दिनांक 30 अप्रेल के शुभ दिवस, पूर्वी बंगाल (वर्तमान बांग्लादेश) के त्रिपुरा जिला ग्राम खेवड़ा में एक अतीव सुन्दरी कन्या का जन्म हुआ। आपकी वंश परम्परा का मूल स्रोत भगवान विष्णु के परम अनुयायी कश्यप ऋषि से निसृत हुआ है।

अत्यन्त सरल, सदाचारी एवं धर्मावलम्बी स्वभाव की प्रतिमूर्ति उनकी माता मोक्षदा सुन्दरी देवी की कालान्तर में अपनी इस अद्‌भुत् कन्या रत्न के 'माँ' के रूप के उद्‌भव में प्रमुख भूमिका रही थी। तद्‌नन्तर सभी लोग उन्हें स्नेहवशात् "दीदी माँ" नाम से सम्बोधित करते थे। बालिका के जन्म से पूर्व दीदी माँ को अनेक देवी-देवताओं के दर्शन होते थे तथा एक दिन एक देवी मूर्ति मानो अपूर्व ज्योति चक्र के रूप में घूमते-घूमते उनके शरीर में प्रविष्ट हो गई थी।

बालिका के पिता श्री विपिन बिहारी भट्टाचार्य के व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषता उनका आध्यात्मिक रूझान एवं तीव्र सांसारिक वैराग्य था। उनका अधिकतर समय विभिन्न स्थानों का भ्रमण करते हुये मधुर भगवन्नाम-संकीर्तन में व्यतीत होता था। कई बार वह महीनों गायब रहते और भिक्षुक की तरह जीवन यापन करते हुए आध्यात्मिक अभ्यास में लगे रहते।

बालिका का नामकरण 'निर्मला सुन्दरी देवी' किया गया जिसका अर्थ त्रुटिहीन सौंदर्य की देवी है। माँ ने अनेक अवसरों पर कहा है *"मैं जैसी जन्म के समय थी, वैसी ही बाल्यकाल में थी तथा वैसी ही आज भी हूँ।"* दीदी माँ बताती हैं कि जन्म के समय सामान्य शिशु की भाँति रूदन न करते हुये बालिका का मुखमण्डल शान्त, सजग एवं ज्योतिर्मय था। तत्पश्चात् जन्म के समय उपस्थित व्यक्तियों का तथा शैशवकाल में घटित विभिन्न घटनाओं का उल्लेख कर वे सभी को चकित कर देती थी।

शिशु की अलौकिकता का प्रथम आभास माता को प्रारम्भिक काल में ही हो गया था। एक दिन 'निर्मला सुन्दरी' पालने में सो रही थी। दीदी माँ अपने गृह कार्य में संलग्न थीं, तभी उन्हें एक प्रदीप्त मुख मण्डल एवं जटाजूटधारी सन्त पुरूष, करबद्ध मुद्रा में शिशु के समीप खड़े दृष्ट हुए। उन्होंने माता को सम्बोधित करते हुये कहा – "यह सामान्य बालिका नहीं है। इन्हें सामान्य जीवन के नियमों में सीमाबद्ध करना भी सम्भव नहीं होगा। यह अन्य कोई नहीं अपितु सम्पूर्ण जगत की माँ है।" शिशु को आशीर्वाद प्रदान कर वे चले गये। उनका अनुगमन करने पर दीदी माँ ने पाया कि वे तत्क्षण अदृश्य हो गये थे।

वयस वर्धन के साथ-साथ बालिका का अत्यन्त स्नेही तथा मृदु स्वभाव प्रकट होने लगा तथा बाल्यकाल से ही उसमें एक प्रमुख विशिष्टता दृष्टिगोचर हुई – बालिका की स्वयं की कोई इच्छा कदापि नहीं होती थी, न ही कोई कार्य सम्पादन स्वयं के लिए होता था। वह तो एक चिर संतुष्ट एवं अलौकिक आनन्द में ही विचरती थी। उनके सभी क्रिया-कलाप एवं गमनागमन सदैव अन्य की कामना एवं अपेक्षापूर्ति से प्रेरित होते थे। धर्म, समाज तथा जातिगत मान्यताओं से परे निर्मला अपने गाँव में सभी की दुलारी थी तथा हर समय सभी की सेवा व सहायता हेतु तत्पर रहती थी।

उनकी निकटतम सहचरी थी उनकी दादी माँ जिन्हें स्नेहवशात् 'ठाकुर माँ' नाम से सम्बोधित किया जाता था। नन्हीं बालिका यदा-कदा अपनी इन वयोवृद्ध दादी माँ द्वारा उच्चारित संस्कृत के श्लोकों की परिशुद्धता में विद्वतापूर्ण संशोधन कर उन्हें चमत्कृत कर देती थी। एक अवसर पर उन्होंने 'ठाकुर माँ' के समक्ष पूजा-पद्धति से सम्बन्धित जटिल मुद्रायें विशुद्ध रूप से प्रस्तुत करके भी उन्हें आश्चर्यचकित कर दिया था।

एक अन्य अवसर पर खेल-खेल में, अनायास निर्मला की तीक्ष्ण प्रखर दृष्टि ठाकुर माँ पर केन्द्रित होते ही वे गहन समाधि में प्रवेश कर गई थीं। चार वर्ष की आयु में माता के संग कीर्तन में गई बालिका नाम संकीर्तन श्रवण करने पर गहन आन्तरिक भाव में इतनी निमग्न हो गईं कि उनके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी।

असाधारण कन्या

हर समय प्रसन्नचित्त तथा मधुर स्मित की आभा लिए तथा वृक्ष-वनस्पति, लताओं, सूर्य किरणों एवं स्वच्छ वायु के झोकों को प्रिय सहचर के रूप में रखते हुए, नन्हीं निर्मला ने कन्यारूप में प्रवेश किया।

शीतोष्ण, वर्षा एवं अन्य प्राकृतिक तीव्रताओं से अप्रभावित वह सूर्य की तपन में हँसते-गाते प्रकृति से एकरूप हो सहज रूप से विचरती, अनेक अवसरों पर उसे पशु-पक्षी, लताओं, पौधों एवं केवल उसे ही दिखायी देते प्राणियों से वार्तालाप करते हुए भी देखा गया।

बाल्यकाल में एक अवसर पर अपनी सखियों के संग वन मार्ग पर भ्रमण करते समय गौओं का एक समूह उनके सम्मुख आ गया। अन्य सभी सखियाँ भयभीत हो पर्वत पर चढ़ गई किन्तु उन्होंने साश्चर्य देखा कि सभी गौएँ नन्हीं निर्मला को घेर कर स्नेहपूर्वक दुलार रही थी तथा अपने मस्तक से उसके चरण स्पर्श कर रही थी।

बालिका में प्रायः दृष्ट होने वाली अमनस्कता तथा गहन भावावस्था को देखकर दीदी माँ सशंकित हो उठती कि कहीं उनकी पुत्री मन्दबुद्धि

तो नहीं है। प्रारम्भ में उन्हें भान नहीं हुआ कि यह किसी मानसिक रोग के लक्षण नहीं हैं अपितु यौगिक समाधि की उच्चतर अवस्था का निदर्शन है।

भोजन करते-करते कभी-कभी निर्मला का हाथ कुछ क्षणों के लिए मध्य में स्थिर हो जाता और वह आकाश की ओर एकटक दृष्टि से निहारती रहती थी। अनेक वर्ष पश्चात् दीदी माँ द्वारा इस सम्बन्ध में प्रश्न करने पर माँ ने प्रत्युत्तर में हँसते हुए कहा कि वे तो अन्तःदृष्टि से आकाश में विचरण करते देवी-देवताओं को देखती रहती थी।

निर्मला ने मानव जीवन के प्रत्येक चरण की अवस्था के अनुरूप धर्म को उत्कृष्ट एवं परिपूर्णरूपेण प्रकट किया था। बाल्यावस्था में मधुर, निःस्वार्थ एवं हृदय की सरलता का भाव, किशोरावस्था में प्रवेश करने पर अन्य सभी सद्‌गुण यथा – सत्यपालन, माता-पिता, गुरु की आज्ञा का उल्लंघन कदापि नहीं करना, स्वभाव में निष्कपटता इत्यादि सभी जीवनमूल्य समयानुसार व्यक्त होते रहे।

एक अवसर पर वह सम्बन्धियों के संग निकटवर्ती ग्राम में गई थी। उसे मन्दिर के समीप ठहरने का आदेश देकर सभी महिलाऐं स्थानीय बाजार में चली गई। अनुमानित समय से अधिक व्यतीत होने पर एकाएक उन्हें निर्मला का स्मरण आया। उनका अनुमान था कि बालिका अवश्य ही इधर-उधर चली गई होगी। किन्तु शीघ्रता से लौटने पर उन्होंने देखा कि नन्हीं निर्मला आज्ञा का पालन करते हुए, इतने घण्टे बीत जाने पर भी वहीं जस-की-तस बैठी हुई थी।

निर्मला सभी धर्मो के क्रिया-कलापों के प्रति आकर्षित होती थी। हिन्दू और मुसलमान सभी ग्रामवासियों को वह समान रूप से प्रिय थी। एक समय गाँव के निकट लगे ईसाई कैम्प में उनकी ईश-स्तुति सुनने निर्मला रात्रि में अकेली चली गई थी। संध्या का समय निर्मला अधिकतर अपने पिता के संग भगवन्नाम संकीर्तन में व्यतीत करती थी।

सरल, सहज बालिका अनेक अवसरों पर अपने अंतर्ज्ञान से अपने सहचरों एवं ज्येष्ठजन को अचम्भित कर देती थी। एक दिन खेल-खेल में निर्मला ने गीली बालू से एक सुन्दर गोलाकार वृत्त बनाया और सबको दिखाते हुये कहने लगी – *"जिस प्रकार शालिग्राम में नारायण विद्यमान हैं, उसी प्रकार इसमें मैं दैवीय तथा अन्य सभी स्वरूपों को देख रही हूँ। सब एक में है तथा वही एक सब में है।"* इतना कहकर बालू के गोले को बिखेरकर हँसते हुए फिर खेलने लगी।

इसी प्रकार खेल के मध्य अकस्मात् वे शान्त, स्थिर एवं अन्तर्मुखी हो जाती, मुखमण्डल एक त्वरित आभा से आलोकित हो उठता। प्रत्यक्षदर्शियों को लगता मानो आकाश में बिजली कौंधी हो। इस प्रकार की अवस्था होने पर कदाचित् कभी-कभी उनके मुख से विशुद्ध संस्कृत में मन्त्र प्रस्फुटित होने लगते थे।

बालिका निर्मला ने विद्याध्ययन के साथ-साथ एक भारतीय कन्या हेतु शोभनीय सभी गृह कार्यों में दक्षता प्राप्त कर ली थी। सिलाई एवं पाक-कला में भी वह अत्यन्त निपुण थी। स्वभाव से मृदु एवं सरल होने पर भी उनके ज्येष्ठजन को स्पष्ट आभास हो गया था कि उनकी कन्या विशिष्ट शक्तिरूपा है, जिसके साथ खिलवाड़ करना उचित नहीं होगा।

एक दिन जब उसे बर्तन में दही भर कर रसोई में लाने के लिए कहा गया तो उसने आज्ञापारिता करते हुए बर्तन को इस तरह पूरा भर दिया कि उसमें उपर तक जरा सी भी जगह खाली नहीं बची। उसे डाँटते हुए कहा गया, "नासमझ लड़की, आज तुम्हें ज़रा भी दही नहीं मिलेगी।" ये शब्द उच्चारित होते ही कमरे के बाहर रखा बर्तन टूट गया और सारा दही फर्श पर गिर गया।